INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATIONS

October - 2025 E-ISSN : 2348-7143

International Research Fellows Association's

RESEARCH JOURNEY

International E-Research Journal

Peer Reviewed, Referred & Indexed Journal

Issue – 367 (E)

Indian Knowledge System

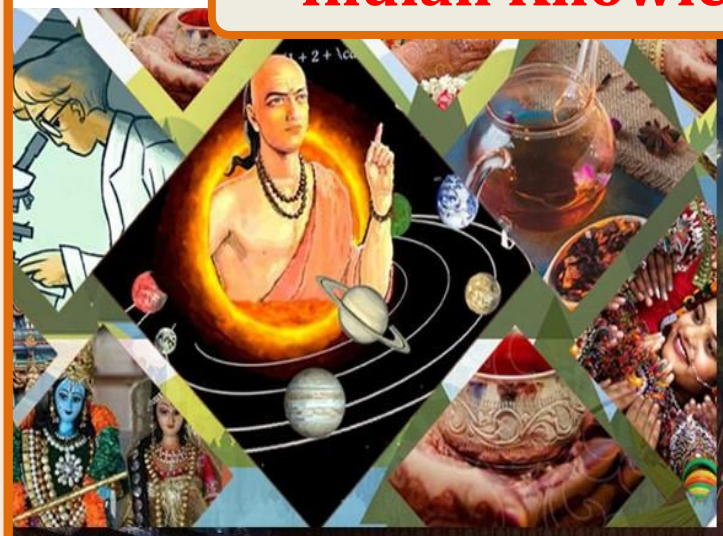

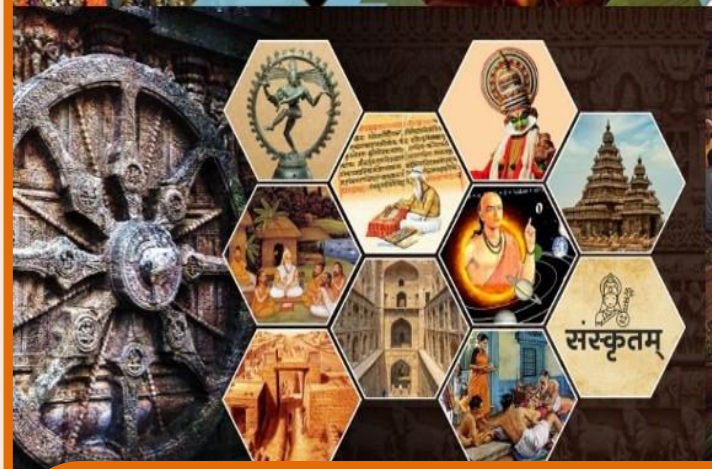

Guest Editor -
Dr. Rajendra Sayabu More,
Principal
Chhatrapati Shivaji College,
Satara, Dist-Satara (M.S. India)

Executive Editors :
Dr. Manohar Subhash Nikam
Co Editors :
Dr. Vikas Yelmar
Dr. Mahadev Chinde

Chief Editor - Dr. Swati Lawange-Sonawane

For Details Visit To : www.researchjourney.net SWATIDHAN PUBLICATIONS

October 2025 E-ISSN : 2348-7143

International Research Fellows Association's

RESEARCH JOURNEY

International E-Research Journal

Peer Reviewed, Referred & Indexed Journal

Issue – 367 (E)

Indian Knowledge System

Editorial Board of this Issue

Guest Editor -
Dr. Rajendra Sayabu More,
Principal
Chhatrapati Shivaji College,
Satara, Dist-Satara (M.S. India)

Executive Editors :
Dr. Manohar Subhash Nikam
Co Editors :
Dr. Vikas Yelmar
Dr. Mahadev Chinde

Chief Editor - Dr. Swati Lawange-Sonawane

Review Committee of this Issue

Dr. Dhanaji Masal
Dr. Ganesh Lokhande
Dr. Samadhan Mane
Dr. Sharad Thokale
Dr. Dattaray Korde

Our Editors have reviewed papers with experts' committee, and they have checked the papers on their level best to stop furtive literature. Except it, the respective authors of the papers are responsible, answerable and accountable for their content, citation of sources and the accuracy of their references and bibliographies/references. Editor in chief or the Editorial Board cannot be held responsible for any lacks or possible violations of third parties' rights. Any legal issue related to it will be considered in Yeola, Nashik (MS) jurisdiction only.

- Chief & Executive Editor

SWATIDHAN INTERNATIONAL PUBLICATIONS
For Details Visit To : www.researchjourney.net

***Cover Design :** Source AI

© All rights reserved with the authors & publisher Price : Rs. 1000/-

25	भारतीय दळणवळण व्यवस्थेत झालेल्या बदलाचा अभ्यास	प्राचार्य डॉ. राजेंद्र मोरे	131
26	ऐतिहासिक पार्श्वभूमीवर नवीन शैक्षणिक धोरणाचे अवलोकन	डॉ. मनोहर निकम	135
27	भारतीय मानसशास्त्राच्या दृष्टीकोनातून आत्मा आणि व्यक्तिमत्व संकल्पना	डॉ. स्वाती भोंगळे	139
28	प्राचीनतेपासून आधुनिकतेपर्यंत : भारतीय न्याय व प्रशासनाचा प्रवास	प्रा. ॲड. प्रियांका झोळे पाटील	142
29	पद्मभूषण डॉ. कर्मवीर भाऊराव पाटील यांच्या शैक्षणिक तत्त्वज्ञानाचा भारतीय ज्ञान प्रणालीशी संबंध : एक अभ्यास	डॉ. केशव मोरे	147
30	मानसिक विकृती:आयुर्वेदीय औषधोपचार आणि प्लासिबो प्रभाव	डॉ. गणेश लोखंडे	154
31	मंत्रध्वनी चिकित्सा : एक मानसिक उपचार पद्धती	रामकृष्ण जोशी	162
32	मराठा स्थापत्य आणि अभियांत्रिकी कलेचा उत्कृष्ट नमुना - बारामोटेची विहीर	रोहित कांबळे	165
33	महाराष्ट्राच्या शैक्षणिक विकासामध्ये बाळासाहेब देसाई यांचे योगदान	डॉ. सदाशिव मोरे	170
34	प्राचीन भारतातील कला आणि रंग विज्ञान	साक्षी महामुलकर	174
35	डॉ. पतंगराव कदम यांनी आदिवासी समाजासाठी केलेले शैक्षणिक कार्य	श्री. संतोष कोरडे	179
36	वीरशैव संप्रदायातील महात्मा बसवेश्वर यांचे योगदान	सतिश रिंढे	184
37	भारतीय ज्ञानपरंपरेची ऐतिहासिक उत्क्रांती: एक अभ्यास	श्री. शिवाजी माने, डॉ. विजयकुमार भांजे	189
38	एकोणिसाव्या शतकातील सामाजिक आणि धार्मिक चळवळींचा अभ्यास	प्रा. स्वप्नाली निकम	194
39	धार्मिक पर्यटनाची भारतीय ज्ञानपरंपरा	विनायक कांबळे, चंद्रशेखर काटे	199
40	नाशिक जिल्ह्यातील स्वातंत्र्यसैनिकांच्या स्वातंत्र्योत्तर कार्याचा भारतीय ज्ञान प्रणालीशी असणारा सहसंबंध : चिकित्सक अभ्यास	विनोद वाघ, डॉ. नाथा मोकाटे	202
41	प्राचीन व मध्ययुगीन भारतातील शिक्षण व्यवस्था : गुरुकुल, विद्यापीठे, मदरसा	युवराज नळे, डॉ. विष्णू वाघमारे	208
42	दक्षिण भारतीय मंदिरांचे स्थापत्यशास्त्रीय वैशिष्ट्य : गोपुरम	डॉ. सुप्रिया खोले	213
43	भारतीय ज्ञान परंपरा में हिंदी संत साहित्य का योगदान	कॅप्टन डॉ. रविंद्र पाटील	216
44	हरियाणा के साहित्यकारों का हिंदी साहित्य के क्षेत्र में योगदान	डॉ. रेणुका, पूनम	220
45	श्रीमन्महाभारत एककर्तृक या अनेककर्तृक ?	श्री. उन्मेष जोशी	223
46	वैदिक काल में स्त्री सशक्तिकरण	राणी लोहकरे	226

Our Editors have reviewed papers with experts' committee, and they have checked the papers on their level best to stop furtive literature. Except it, the respective authors of the papers are responsible, answerable and accountable for their content, citation of sources and the accuracy of their references and bibliographies/references. Editor in chief or the Editorial Board cannot be held responsible for any lacks or possible violations of third parties' rights. Any legal issue related to it will be considered in Yeola, Nashik (MS) jurisdiction only.

- Chief & Executive Editor

'RESEARCH JOURNEY' International E- Research Journal
Issue 367 (E) : Indian Knowledge System
Impact Factor : 6.625 (SJIF) Peer Reviewed Journal
E-ISSN : 2348-7143
October 2025

भारतीय ज्ञान परंपरा में हिंदी संत साहित्य का योगदान

कॅप्टन डॉ. रविंद्र पाटील
हिंदी विभाग,
राजर्षि छत्रपति शाहु कॉलेज, कोल्हापुर (महाराष्ट्र) 416003
ई-मेल : rcpatilshahu@gmail.com मो. 9552564248

शोध सार :

अतः हम कह सकते है कि भारतीय ज्ञान परंपरा हजारों साल पुरानी है। जिसकी शुरुवात वेदों से मानी जा सकती है। जिसके अंतर्गत विज्ञान, गणित, चिकित्सा और मानविद्या का समावेश हुआ है। भारतीय साहित्य में संत साहित्य का असाधारण महत्व है। संत साहित्य भावात्मक और अनुभूतिप्रवण है। संत साहित्य में रस अलंकार, व्याकरण तथा काव्य के तत्वों को महत्त्व नहीं है। संत साहित्य का मूल उद्देश्य मानव संस्कृति और सभ्यता को स्थापित करना है। संत साहित्य के केंद्र में भक्ति और भक्तिरस है। संत साहित्य में लोकमंगल की भावना है। अंधविश्वास, रूढि, परंपरा, अज्ञान जैसी बातों और खंडन संत साहित्य में हुआ है। संत कबीर, संत नामदेव, रैदास, गुरुनानक, संत तुकडोजी आदि संत साहित्यकार के नाम सम्मान के साथ लिए जा सकते है। इन सभी संतो का समाज प्रबोधन में बहुत बडा योगदान है। निर्गुणभक्तिधारा के प्रवर्तक संत कवि कबीर के काव्य में समाज प्रबोधन की भूमिका स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। साखी और पदों के माध्यम से सामाजिक आडंबरों और जाति-पाति पर कडा प्रहार किया है। कबीर के काव्य में लोकसंग्रह की भावना दिखाई देती है। संत रैदास में शांति, संयम और विनम्रता के गुण थे। रैदास ने कविता के माध्यम से सामाजिक सद्भावना का संदेश दिया है। उनका साहित्य मानवतावादी दृष्टिकोन से परिपूर्ण है। उन्होंने भारतीय समाज और संस्कृति के विकृत रूप का विरोध किया है।

महाराष्ट्र के वारकरी संप्रदाय के प्रचारक एवं समाज सुधारक के रूप में संत नामदेव की पहचान है। उनकी दूसरी पहचान निर्गुण संप्रदाय के संत के रूप में है। संत तुकडोजी मानव धर्म को सर्वश्रेष्ठ धर्म मानते थे। हिंदी साहित्य में तुकडोजी की पहचान राष्ट्रसंत के रूप में हैं। उनके अनुसार "इस संसार में जो काम करेगा वही भोजन के अधिकारी होगा। वे शिक्षा को उन्नती और विकास का मूलमंत्र मानते थे। संत तुकडोजी के काव्य में देश-प्रेम की भावना कुटकुटकर भरी हुई थी। वे देश के युवाओं को सच्चे रक्षक एवं शुरवीरों का इतिहास बताते है। उनके अनुसार देश के शास्वत विकास के लिए जाति-पाति का जड़ से मिटना जरूरी है। वे देश के लोगों को जाति-पाति मिटाकर एक साथ रहने के लिए कहते हैं। अतः भारतीय संत कवियों का भारतीय ज्ञान परंपरा में बहुत बडा योगदान है।

भारतीय ज्ञान परंपरा प्राचीन है। जिसका संबंध वैदिक काल से भी पहले से है। इसमें विज्ञान, गणित, चिकित्सा, दर्शनशास्त्र, खगोलशास्त्र, अध्यात्मिकता, कला, साहित्य जैसे विविध क्षेत्रों का गहरा ज्ञान शामिल है। वैसे देखा जाय तो भारतीय ज्ञान परंपरा हजारों वर्ष पुरानी है, जिसकी शुरुआत वेदों से मानी जा सकती है। इसका संबंध सिर्फ अध्यात्मिकता से नहीं इसमें विज्ञान, गणित, चिकित्सा और मानविद्या के अनेक क्षेत्रों से है। जो हमारी संस्कृति की मूल पहचान है।

भारतीय ज्ञान परंपरा में संत साहित्य का अनन्य साधारण महत्त्व है। भारतीय ज्ञान परंपरा के इतिहास में संत साहित्य और भक्तिमार्ग को विशिष्ठ स्थान प्राप्त है। संत साहित्य का दार्शनिक आधार उपनिषद, शंकराचार्य का अद्वैतवाद, नाथ पंथ सुफी दर्शन आदि का समावेश है। एक प्रकार से इस संप्रदाय को विश्वसंप्रदाय कह सकते हैं। संत साहित्य भावात्मक और अनुभूतिप्रवण है। संत साहित्य किसी शास्त्र अथवा सिद्धांत के प्रति आग्रह नहीं है। संत साहित्य का उद्भव आम जनमानस से हुआ है। संत साहित्य में रस, अलंकार, व्याकरण तथा काव्य के तत्वों को महत्त्व नहीं है। संत साहित्य का मूल उद्देश्य सत्य, भक्तिमार्ग का प्रचार-प्रसार, समाज-प्रबोधन, मानव संस्कृति और सभ्यता को स्थापित करना आदि बातें महत्त्वपूर्ण होते हैं।

संत साहित्य के केंद्र में भक्ति और भक्ति रस है। संत साहित्य का लक्ष्य काव्य रचना न होकर लोकमंगल की भावना से है। संत साहित्य की भाषा सहज, सरल एवं स्पष्ट है। संत साहित्य ने स्वातसुखाय, जनकल्याण, विधायक कार्यो जैसी बातों को अधिक महत्त्व दिया है। अंधविश्वास, रूढि परंपराओं, अज्ञान जैसी बातों का खंडन किया है।

संत साहित्य भारतीय साहित्य का अभिन्न अंग है। संत भारतीय समाज व्यवस्था के लिए मार्गदर्शक हैं। संतो ने समाज में फैली अज्ञान, अंधश्रद्धा, शोषण, छुआछुत, जातीयता, कर्मकांड, झूठी मान्यताओं पर कठोर प्रहार किया है। विभिन्न प्रदेशों से जुड़े संतों ने अपने-अपने प्रादेशिक भाषा का उपयोग करके समाजहित की परंपरा को उजागर किया है। साथ ही भारतीय ज्ञान परंपरा को आगे बढाया है। हिंदी साहित्य में अनेक संतों का जिक्र हुआ है। जिनमें संत कबीर, संत दादू दयाल, संत नामदेव, रैदास, गुरु नानक, संत तुकडोजी, जायसी जैसे अनेक नाम सम्मान के साथ लिए जा सकते हैं। इन संतों का समाज प्रबोधन में बहुत बडा योगदान रहा है। हिंदी साहित्य के भक्तिकाल को सुवर्णकाल भी कहा गया है। यह काल परिवर्तन का काल साबित हुआ है। राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं कला के क्षेत्र में भी भारी मात्रा में परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं। इस कालखंड को युग परिवर्तन काल भी कहा जाता है। यह आंदोलन सामाजिक जड़ता से समाज को निकालने की बेचैनी से निर्माण हुआ आंदोलन था। जो आम लोगों का अपना आंदोलन था। जो इसके संदर्भ में के. दामोदरन अपनी पुस्तक भारतीय चिंतन परंपरा में लिखते हैं, "भक्ति आंदोलन उस समय आरंभ हुआ था, जब हिंदू और मुसलमान पुरोहितों और उनके द्वारा समर्पित और समृद्ध किये गये निहित स्वार्थी के खिलाफ संघर्ष एक ऐतिहासिक आवश्यकता बन गया था। जनता जो अब तक क्षेत्रीय और स्थानीय निष्ठाओं से आबद्ध थी और युगो पुराने अंधविश्वास और दमन शोषण के बावजुद हतोत्साह नहीं हुई थी। जगाया जाना और अपने हितों तथा आत्म सम्मान की भावना के लिए उसे एक किया जाना आवश्यक था। स्थानीय बोलियों और क्षेत्रिय भाषाओं को, एकता स्थापित करनेवाली राष्ट्रभाषा के स्तर को उठाना था।"[1]

संत कबीर :

भारतीय साहित्य एवं ज्ञान परंपरा में संत कबीर को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। इतिहास में प्रमाण मिलते है कि वे रामानंद के शिष्य और शिकंदर लोधी के समकालीन थे। वे खुद निरक्षर थे परंतु उनकी वाणी ताकत थी। उनकी भाषा खिचडी होने के बावजूद भी दोहो और पदों के माध्यम से समाज में फैली विषमता पर प्रहार करने काम किया है। डॉ. रामकुमार शर्मा संत कबीर की भाषा के संदर्भ में लिखते है, "कबीर का काव्य बहुत स्पष्ट और प्रभावशाली है। यज्ञपि कबीर ने पिंगल और अलंकार के आधार पर काव्य-रचना नहीं की तथापि उनकी काव्यानुभूति इतनी उत्कृष्ट थी कि वे सरलता से महाकवि कहे जा सकते है।

"नैनो की करि कोटरी, पुतली पलंग बिष्ठाइ।
पलकों की चिक डारि के पिय को लिया रिझाइ।"[2]

निर्गुणभक्तिधारा के महान संत कवि कबीर के काव्य में समाज प्रबोधन की भूमिका स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उन्होंने साखी और पदों के माध्यम से निर्गुण ईश्वर में विश्वास, बहुदेववाद तथा अवतारवाद का विरोध, गुरु का महत्व, जाति-पाति के भेदभाव का विरोध, सदियों और आडंबरों का विरोध, रहस्यवाद, भजन तथा नामस्मरण, श्रृंगार वर्णन एवं विरह का चित्रण, लोकसंग्रह की भावना, नारी के प्रति दृष्टिकोण आदि विशेषताओं के माध्यम से समाज प्रबोध में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। निर्गुण काव्यधारा के प्रवर्तक संत कबीर को संत साहित्य में सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। इनका मानना है कि ईश्वर निर्गुण और निराकार है। वह सृष्टी के कणकण में समाया है। वह सर्व व्यापक और सर्व शक्तिमान है। वे अपनी पदों और साखी के माध्यम से सामाजिक जीवन मूल्यों को उद्घाटित करते है। वे कहते है, "पोथी पढि-पढि जग मुआ पंडित भया न कोय। ढाई अक्षर प्रेम के पढ़े सो पंडित होय।"[3]

कबीर ने मुर्तिपूजा का विरोध, पाखंडी वृत्ति का विरोध, खुलकर करते हैं। कबीर के अनुसार जीव को ब्रहम से मिलने के लिए उपासना या भक्ति साधना करना आवश्यक है। उनके अनुसार पत्थर पुजने से अगर भगवान की प्राप्ति होती है तो मैं पत्थरों से भरे पूरे पहाड की पुजा करूँगा वे कहते हैं,

"पत्थर पूजै हरि मिले सौ में पूजू पहार।
ताते वह चक्की भली पीस खाय संसार।।"[4]

अतः यहाँ कबीर ने मूर्ति पुजा का खंडन किया है। उनका मानना है कि निर्गुण निराकार राम सृष्टी के कण-कण में समाया हुआ है। कबीर हिंदू मुसलमानों में एकता स्थापित करने के लिए एक सामान्य भक्तिमार्ग स्थापित करना चाहते थे। वे हिंदू और मुसलमान दोनों धर्मों के रुढियाँ, आडबंरों, अंध-विश्वासों पर करारा प्रहार करते हैं,

"अरे इन दोहन राह न पाई।
हिंदुअन की हिंदुआई देखी, तुरकन की तुरकाई।"[5]
"तू ब्राह्मण में काशी का जलाहा चीन्ह न मार गियाना।"
तू जो बामन जाया और राह है क्यों नहीं आया।"[6]

संत कबीर रुढियों, मिथ्या-आडंबरों तथा अंधविश्वास का कडा विरोधी है। उन्होंने तत्कालीन समाज में स्थित बूरी प्रवृत्तियों का खुलकर विरोध किया है।

संत रैदास (रविदास):

इनका भी समावेश रामानंद की शिष्य परंपरा में होता है। संत कबीर के समकालीन संतों में रैदास का नाम सम्मान के साथ लिया जाता है। उनका जन्म काशी में हुआ था। रैदास कबीर के पंरपरा के कवि होने के बावजुद भी उन दोन्हों के स्वभाव में काफी अंतर दिखाई देती है। संत कवीर में ओज अकखडता और प्रखरता थी। वहीं दूसरी ओर रैदास में शांति, संयम और विनम्रता के गुण थे। रैदास का प्रभाव राजस्थान में अधिक देखा जा सकता है। मेवाड की झालारानी इनकी शिष्या होने के प्रमाण मिलते हैं। उनकी भाषा ब्रज है, जिसमें राजस्थानी खडीबोली, अवधी, उर्दू-फारशी शब्दों का मिश्रण हुआ है।

रैदास ने मूर्तिपूजा, तीर्थयात्रा, जाति-पाति, सामाजिक आडंबरों आदि का खुलकर विरोध किया है। उनका मानना था सच्चे भक्त की कोई जाति नहीं होती। जहाँ-जहाँ निचले वर्ग के लोगों को मंदिर में प्रवेश नहीं दिया जाता था ऐसे मंदिरो एवं मूर्ति का रैदास ने विरोध किया है। रैदास ने अपनी काव्य पक्तियों के माध्यम से सामाजिक सद्भाना का संदेश दिया है। वे कहते हैं, "जब एक करि दो हाथ पत्र, दोउ नैन दोउ कान। रविदास पृथक कैसे भये, हिंदू मुसलमान।"[6]

रैदास का साहित्य मानवतावादी दृष्टि से परिपूर्ण साहित्य है। इनका साहित्य धार्मिक और सामाजिक समानता का संदेश देती है। वे धार्मिकता के विरोधी थे। उन्होंने हिंदू और मुसलमानों में कभी भेदभाव नहीं किया। वे श्रमिकों को सम्मानपूर्वक जीने की राहा बनाते हैं। उन्होंने भारतीय समाज और संस्कृति के विकृत अंश का डटकर विरोध किया है।

संत नामदेव :

महाराष्ट्र के वारकरी संप्रदाय के प्रचारक एवं समाजसुधारक के रूप में संत नामदेव की पहचान है। उनका जन्म सातारा जिले के कराड क्षेत्र में हुआ था। वे विठ्ठल भक्त थे। इनकी दूसरी पहचान निर्गुण संप्रदाय के संत के रूप में भी है। संत नामदेव बचपन से ही सत्य के उपासक और झूठ के प्रखर विरोधक थे। इसी के परिणाम के चलते उत्तर भारत में जब अराजकता की स्थिति बनी हुई थी, विदेशी आक्रमण से जनता चिंतित थी, ऐसे समय में पंजाब में रहकर जनता को बहुदेवोपासना, बाह्यडंवर, जातिभेद, उँच-निचना, झूआछूत आदि बातों के प्रति सावधान रहने के लिए कहा। संत नामदेव के सिद्धांत व्यापक और सरल हैं। वे स्वभाव से धुम्मक्कडी थे इसी के परिणाम के चलते उनकी रचनाओं में पंजाबी, अरबी, फारसी, राजस्थानी आदि शब्द मिलते हैं।

संत तुकडोजी महाराज:

महाराष्ट्र के अमरावती जिले के 'यावली' गाँव में जन्में संत तुकडोजी महाराज की पहचान राष्ट्रसंत के रूप में है। उनका बचपन धार्मिक परिवेश में गुजरा। उन्हें भजन किर्तन में काफी रुची थी। तुकडोजी महाराज का उनपर प्रभाव था इसी कारण वे मानव उद्धार के मार्ग पर चल पढ़े। उनके संदर्भ में प्रभाकर पंडित लिखते हैं, "अपनी अनुठी भजन

शैली द्वारा खंजडी की धुन पर भारत भक्ति एवं भगवान भक्ति में भावविभोर करनेवाले भक्त श्रेष्ठ तुकडोजी महाराज वर्तमान युग में भारत को मिली संत परंपरा की अद्भुत देन है।"[7]

संत तुकडोजी मानव धर्म को सर्वश्रेष्ठ धर्म मानते हैं। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपना कर्म करते रहना चाहिए और किसी की मुक्त की रोटी नहीं खानी चाहिए। देश के हर एक व्यक्ति को श्रम करना चाहिए। इससे अपने आप देश का विकास होगा। इस संसार में जो काम करेगा, वही भोजन का अधिकारी होगा। इसके संदर्भ काव्य पंक्ति दृष्टव्य है, "मानव का है धर्म किसी का, मुक्त नहीं कुछ खाना है। श्रम करना दुनिया में तब ही, भोजन हक्क का पाना है।"[8]

संत तुकडोजी अपने जीवन में शिक्षा को अधिक महत्त्व देते थे। वे शिक्षा को देश की उन्नती और विकास का मूलमंत्र मानते थे। वे दूरदृष्टी थे। उनका मानना था कि अगर देश को ऊँचा ले जाना हो तो शिक्षा में बदलाव होना जरुरी है। वे छात्रों को प्रकृति के गोद में शिक्षा देने की इच्छा व्यक्त करते है।

देश प्रेम की आवना :

संत तुकडोजी के तन-मन देशप्रेम की भावना कुट-कुटकर भरी हुई दिखाई देती है। देश के लोगों में राष्ट्रप्रेम और स्वाभिमान की भावना जगाने का काम संत तुकडोजी ने अपने भजन और किर्तन के माध्यम से किया है। वे देश के वीर जवानों को प्रेरणा देते हुए कहते हैं, "हम भारत की शान है, वीरों की संतान है। बडो जवानों, लडो शत्रु से, चाहो तो बलिदान है।"[8] तुकडोजी महाराज देश के युवाओं को देश के सच्चे रक्षक एवं शुरवीरों का इतिहास बताते हैं। वे छत्रपती शिवाजी महाराज, महाराणा प्रताप, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, भगतसिंग, सुभाषचंद्र बोश, महात्मा गांधीजी। जैसे महापुरुषों का इतिहास बताकर जवानों एवं युवाओं में नवचैतन्य भरते हैं।

जाति-पाति का विरोध :

संत तुकडोजी जानते थे की जाति-पाति के कारण भारतीय समाज व्यवस्था में विषमता की स्थिति बनी हुई है। जब तक यह जड से मिटेगी नहीं तब तक भारत का शास्वत विकास नहीं हो पाएगा। तुकडोजी के अनुसार व्यक्ति की सही पहचान उसके ज्ञान से होनी चाहिए, उसके जाति और कुल से नहीं। वे कहते हैं,

"छुआछूत का भेद न मानो, सब है भाई हमारे।
काम करो अपनी इच्छा से, सब उद्योग हमारे।"[9]

अतः यहाँ पर हर भारतवासी को जाति-पाति, ऊँच-निचता, जैसी बातों को भूलकर एक साथ रहने के लिए कहते हैं।

संदर्भ संकेत :

1. के दामोदरन, 'भारतीय चिंतन परंपरा', प्युपल पब्लिक, हाऊस प्रकाशन, 1990, पृष्ठ 53
2. शिवकुमार शर्मा, 'हिंदी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ', अशोक प्रकाशन नई दिल्ली, पृष्ठ 119
3. वहीं, पृष्ठ 126
4. वही, पृष्ठ 133
5. वही, पृष्ठ 142
6. शिवकुमार मिश्र, 'भक्तिकाव्य और लोकजीवन', पृष्ठ 78
7. प्रभाकर सदाशिव पंडित, 'महाराष्ट्र के संतों का हिंदी काव्य' पृष्ठ 147
8. संत तुकडोजी महाराज, वाचावल्ली, पृष्ठ 8